दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र

हमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

□ वर्ष 64 □ अंक-12 □ दिल्ली □ मार्च (द्वितीय) □ मूल्य : 2 रु.

मूल निवासियों की सभ्यता आर्य सभ्यता से ऊंची थी

• बाबू जगजीवनराम, पूर्व उपप्रधानमंत्री, भारत

आर्यों के भारत में आने से पहले हमारा समाज एक विकसित समाज था। अभी जो खुदाइयां हुई हैं, मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में उनसे यह साबित हुआ है कि आर्यों के भारत आने से पहले भारत के मूल निवासियों की सभ्यता बहुत बढ़ी हुई थी। हमारी सभ्यता इतनी बढ़ी हुई थी तो हमारा कोई धर्म भी होगा। और वह धर्म आर्यों के धर्म से पुराना होगा। चाहे वह वैदिक धर्म हो, चाहे श्रमण धर्म हो। वैदिक धर्म और श्रमण धर्म दोनों ही आर्य धर्म हैं। हमारा धर्म दोनों से पुराना है। हमारा धर्म कर्म साधना में है। हमारे इस धर्म पर ही दोनों ठहरे हुए हैं। वैदिक धर्म और श्रमण धर्म–दोनों धर्मों का मूल सिद्धांत सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, और सम्यक् कर्म का है। वैदिक और श्रमण दोनों में पहले दर्शन, तब ज्ञान और अंत में कर्म। यहां पहली सीढ़ी 'कर्म' की नहीं है। लेकिन हमारे धर्म, तंत्र की साधना ऐसी है कि उसमें पहले साधना (कर्म), कर्म से ज्ञान और अन्त में दर्शन। दर्शन ज्ञान और कर्म एक तरफ और कर्म ज्ञान और दर्शन दूसरी तरफ। दर्शन का निरूपण किसी ने कर दिया उसके प्रकाश में तुम ज्ञान अर्जन करो और तब कर्म करो। मूलवासियों की हमारी परम्परा में सरल तरीका है कि साधना करो, ज्ञान बढ़ेगा, ज्ञान बढ़ेगा तो दर्शन का निरुपण हो जायेगा। दर्शन से साक्षात्कार होना तो नहीं है। न हीं मिले तो कोई हर्ज नहीं। हमारी परम्परा में, संतों की परम्परा में, हम कर्म को महत्व देते हैं, दर्शन को महत्व नहीं देते। दर्शन तो दिमागी कसरत कराने वाली चीज है, आदमी को चक्कर में डालने वाली चीज है। हमारा कर्म–प्रधान धर्म रहा है। कर्म अगर नहीं हो तो ज्ञान और दर्शन दोनों बेकार हो जाते हैं।

विषमता नहीं थी हमारे में, सभी बराबर थे। जाति मिटाने की बात, जाति मिटाना होगा तो हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था पर सीधी चोट करनी होगी। यह बात याद रखिये। हिन्दू समाज का व्यक्ति कहीं चला जाये, किसी दूसरे धर्म को स्वीकार कर ले जाति को छोड़कर नही जाता। उसकी जाति उसके साथ चिपटी रहती है। मुसलमान बन जाये तो जाति पीछे लगी रहती है। ईसाई बन जाये तो जाति पीछे लगी रहती है। अनुसूचित जाति के लोग ईसाई बने तो अछूत ईसाई कहलाये, सिख बने तो रामदासिया और मजहबी सिख जाने जाते हैं अर्थात् अछूतपना सूचक उपाधियां उनके साथ लगी रहीं। हमारी मुक्ति तो एक ही चीज में है अर्थात् हिन्दू समाज का बुनियादी परिवर्तन करके नया समाज बनाना। जब तक नया समाज नहीं बनाते तब तक किसी समाज में हमारी मुक्ति नहीं है। मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था ने सम्पूर्ण भारतीय समाज को प्रभावित और दूषित किया है। आपको सुनकर ताज्जुब होगा कि चार सौ बरस के पहले जो ईसाई हो गये हैं उनकी भी जाति आज तक कायम है।

आर्य जब यहां आये तो वर्ण व्यवस्था अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी। उस समय सिर्फ तीन ही वर्ण थे ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य। वर्ण व्यवस्था कायम होने पर ब्राह्मणों के वर्चस्व के विरुद्ध बहुत बड़ा संघर्ष हुआ। राम ने ब्राह्मणशाही के खिलाफ यहां पहला संघर्ष छेड़ा था और अयोध्या, बक्सर और जनकपुर अर्थात दशरथ, विश्वामित्र और जनक की धुरी कायम हो गई थी। यह क्षत्रीय धुरी थी। दशरथ, विश्वामित्र और जनक तीनों क्षत्रियों के प्रतिनिधि नेता थे। और रिजल्ट क्या हुआ? जनकपुर में धनुषयज्ञ में एकत्रित राजाओं के बीच ब्राह्मण परशुराम आये। वाद विवाद हुआ।

(शेष भाग... पृष्ठ 4 पर)

सम्पादकीय

बाबा साहब और बाबू जी

। डा. सोहनपाल सुमनाक्षर

बाबा साहब डा. भीमराव अम्बेडकर और बाबू जगजीवन राम दलितों के हृदय सम्राट हैं, ध्रुवतारे हैं, मार्गदर्शक हैं और प्रेरणादाता है। बाबा साहब डा. अम्बेडकर और बाबू जगजीवन राम एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। बाबा साहब जहां आकाश में चमकने वाले ऊर्जा के अजस्र स्रोत 'सूर्य' हें, वहीं बाबू जी शीतलता प्रदान करने वाले 'चन्द्रमा' हैं।

बाबा साहब का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महू छावनी (म. प्र.) में हुआ था, वहीं बाबू जी का जन्म 5 अप्रैल, 1908 को सासाराम (बिहार) जिले के चन्दवा गांव में हुआ था। बचपन से ही दोनों को छुआछूत, जात–पांत की ऊंच–नीच, भेदभाव का कटु अपमान झेलना पड़ा। इसलिए दोनों ही हिन्दू धर्म की वर्ण व्यवस्था और ब्राह्मणवाद के सख्त खिलाफ थे, इसलिए वे दोनों ही इस सामाजिक व्यवस्था को बदलना चाहते थे। दोनों ही देश के अछूतों को समता और सम्मान दिलाना चाहते थे। जहां बाबा साहब का मानना था कि हिन्दू धर्म में रहकर अछूतों को न्याय नहीं मिल सकता, न समता व सम्मान मिल सकता है, वहीं महात्मा गांधी के प्रभाव के कारण बाबू जी का मानना था कि हिन्दू धर्म में रहकर हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन करके अछूतों को समता, सम्मान और न्याय मिल सकता है।

बाबा साहब डा. अम्बेडकर बाबू जगजीवन राम से 17 सात बड़े थे, इसलिए दलितोत्थान कार्य उन्होंने 1920 से ही 'मूकनायक' समाचार पत्र निकाल कर शुरू कर दिया था। इसके बाद 1927 में अछूतों को महाड़ के चोबदार तालाब में पानी के लिए तथा 1930 में नासिक के कालाराम मंदिर में भगवान के दर्शन कराने के लिए सत्याग्रह आन्दोलन शुरू किया और विजय दिलाई। 25 दिसम्बर, 1930 को उन्होंने वर्ण व्यवस्था व जात–पांत की जनक मनुस्मृति की होली जलाकर हिन्दू धर्म के ठेकेदारों को मानवीय भेदभाव के खिलाफ चेताया था। 1930–31 को इंग्लैंड में आयोजित 'राउंड टेबुल कान्फ्रेंस' में बाबा की अछूतों को समता के अधिकार दिए जाने की मांग की एवज में ब्रिटिश सरकार ने दलितों को निर्वाचन में आरक्षण एवं चुनाव में दो वोट देने का अधिकार देने की घोषणा की। इसे गांधी जी ने हिन्दू धर्म का विघटन का नाम देकर इसके विरुद्ध यरवदा जेल में आमरण अनशन शुरू कर दिया। हिन्दू नेताओं के भारी दबाव व गांधी जी के प्राणों की रक्षा की दुहाई के सामने बाबा साहब को झुकना पड़ा और इसकी एवज में 'पूना पैक्ट' करना पड़ा जिसके अन्तर्गत निर्वाचन, नौकरी, शिक्षा संस्थान–सभी में अछूतों को उनकी आबादी के अनुपात में आरक्षण देना स्वीकार किया।

गांधी जी का कहना था कि अछूत (दलित) हिन्दू धर्म के अंग हैं और हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन करके उन्हें हिन्दू धर्म में समता व प्यार मिलेगा, जबकि बाबा साहब

(शेष भाग... पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/–
बुद्धा टू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/–
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/–
दलित उद्घोष	डा. सुमनाक्षर	100/–
दलित साहित्य की हुंकार–सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/–
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
मेरे साक्षात्कार–मेरा जीवन संघर्ष	डा. सुमनाक्षर	300/–
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/–
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	100/–
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	100/–
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	100/–
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/–
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/–
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/–
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/–
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/–
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	100/–
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	100/–
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	200/–
Who's who Dalit Writers in India	Dr. Sumanakshar	500/-
Who's Who–International & National Awardees of B.D.S.A.	Dr. Sumanakshar	500/-

पुस्तक मंगाने के लिए अग्रिम राशि निम्नलिखित अकादमी के खाते में भेजें

Bharatiya Dalit Sahitya Akademi
A/c No. - 2592101012292 (Canara Bank)
IFSC - CNRB0002592
Branch - Model Town, Delhi

सम्पादकीय का शेष भाग.....बाबा साहब और बाबू जी

का कहना था कि हिन्दू धर्म कीचड़ का ढेर है, उसे कितना ही धोयें, वह साफ नहीं हो सकता। इसलिए अछूतों (दलितों) का हिन्दू धर्म में रहकर कभी उत्थान नहीं हो सकता। यहां वे सदैव उनके गुलाम बने रहेंगे। इसलिए 1935 में येवला की जनसभा में गांधी जी को जवाब देने के लिए घोषणा कर दी कि हिन्दू धर्म में पैदा होना उनके हाथ में नहीं था, पर हिन्दू रहकर वह मरेंगे नहीं, यह उनके हाथ में है। अपना यह संकल्प उन्होंने 14 अक्तूबर, 1956 को नागपुर की दीक्षा भूमि में अपने 5 लाख अनुयायियों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण कर पूरा किया। इस तरह बाबा साहब ने देश के अछूतों को समता व सम्मान के लिए हिन्दू धर्म को छोड़ बौद्ध धर्म का नया रास्ता दिखाया।

बाबू जगजीवन राम का राजनीति में प्रवेश 1935 में हुआ, तब तक बाबा साहब देश के दलितों के एकमात्र सर्वमान्य नेता के रूप में विख्यात हो चुके थे। बाबा साहब हिन्दू धर्म से अछूतों (दलितों) को अलग करके उसे नुकसान न पहुंचाये, इसीलिए गांधी ने बाबू जगजीवन राम जी को कांग्रेस पार्टी में उच्च पद दिलाकर उन्हें 'दलितों का नेता' कहकर प्रचारित किया और बाबा साहब के सामने बाबू जी को स्थापित करने का प्रयास किया। पर बाबू जी बाबा साहब के अछूतों के लिए किए संघर्षपूर्ण कार्यों से परिचित थे, इसलिए कभी भी उनका खुला विरोध नहीं किया। उन्होंने भारतीय दलित वर्ग संघ बनाकर दलितों में चेतना जाग्रत की और हिन्दू धर्म में व्याप्त छुआछूत जैसी कुरीतियों पर सीधा प्रहार किया। इस तरह बाबा साहब हिन्दू धर्म से बाहर रहकर और बाबू जी हिन्दू धर्म में रहकर दलितों को उनके समता, सम्मान व अन्याय के लिए संघर्ष करते रहे।

1947 में देश आजाद हुआ। भारत सरकार में बाबा साहब को 'कानून मंत्री' व बाबू जी को 'श्रम मंत्री' बनाया गया। इसके साथ ही बाबा साहब को भारतीय संविधान बनाने का काम सौंपा गया। बाबा साहब 'पूना पैक्ट' के करारनामे के अनुसार संविधान में अछूतों (दलितों) को अन्य सवर्ण जातियों के सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्तर पर लाने के लिए सरकारी नौकरियों, शिक्षण संस्थानों एवं अन्य सामाजिक संस्थाओं में विशेष आरक्षण की सुविधा देना चाहते थे, पर कांग्रेसी नेता अछूतों को इस विशेष आरक्षण दिये जाने का विरोध कर रहे थे इसके लिए बाबा साहब ने बाबू जी की मदद ली। बाबू जी ने गांधी से अनुरोध कर कांग्रेस पार्टी पर दबाव बनाया और इस तरह बाबू जी के सहयोग से बाबा साहब संविधान में दलितों को आरक्षण दिए जाने का प्रावधान रखने में सफल हुए। इस तरह बाबा साहब और बाबू जी एक दूसरे के पूरके थे।

बाबा साहब जब तक जीवित रहे, कांग्रेस पार्टी बाबू जी को 'दलितों का नेता' के रूप में प्रोत्साहित करती रही, मंत्रिमंडल में महत्वपूर्ण पद देकर सम्मानित करती रही, ताकि बाबा साहब की दलितों के एकमात्र नेता की छवि न बन सके। बाबू जी इस बात को समझते थे और बाबा साहब को अपना बड़ा भाई मानकर पूरा सम्मान करते थे।

बाबा साहब का 6 दिसम्बर, 1956 को परिनिर्वाण हुआ। दैदीप्यमान सूर्य के ढलते ही बाबू जी के तेज पर भी काले बादल छाने लगे। हालांकि बाबा साहब के बाद भारतीय संविधान में उनके द्वारा प्रदत्त आरक्षण सुविधा कोटे को पूरा करने का काम बाबू जी ने शुरू किया, पर अब सवर्ण नेताओं द्वारा उनका सीधा विरोध होने लगा। क्योंकि बाबा साहब के बाद अब उन्हें 'बाबू जी' की जरूरत नहीं थी। इसलिए 1963 में उन्हें 'कामराज' प्लान के अन्तर्गत नेहरू जी के मंत्री पद से हटाया, क्योंकि नेहरू जी नहीं चाहते थे कि कांग्रेस में उनके बाद बाबू जी वरिष्ठता का दावा ठोंककर प्रधानमंत्री न बन जाये।

हुआ भी यही, 1964 में नेहरू जी की मृत्यु के बाद बाबू जी की उपेक्षा करके लाल बहादुर शास्त्री को और उनकी मृत्यु के बाद फिर से श्रीमती इन्दिरा गांधी को प्रधानमंत्री बना दिया।

इमजेंसी के बाद 1977 में जब जनता पार्टी बनी तो उसने बाबू जी के नेतृत्व में लोकसभा का चुनाव लड़ा और भारी बहुत से विजय प्राप्त की।

जब प्रधानमंत्री बनाने की बात आई तो बाबू जी के साथ धोखा करके मुरारजी भाई को प्रधानमंत्री बना दिया गया। मुरारजी भाई देसाई की सरकार गिरने के बाद भी बाबू जी की अछूत होने के कारण निरन्तर उपेक्षा हुई और उन्हें प्रधानमंत्री नहीं बनने दिया जबकि सिर्फ 14 सांसदों की संख्या के बल पर चौधरी चरण सिंह को प्रधानमंत्री पद की शपथ दिला दी, पर सांसदों का बहुमत होते हुए भी बाबू जी प्रधानमंत्री नहीं बन सके। इसके पीछे सवर्ण मानसिकता सदैव सर्वोपरि रही।

बाबू जी का 5 अप्रैल को जन्म दिवस है और 14 अप्रैल को बाबा साहब का जन्म दिवस है। बाबा साहब और बाबू जी दोनों ने दलितों को देश में समता, सम्मान व न्याय दिलाने में अपना समग्र जीवन बलिदान कर दिया। दलितों की समता की लड़ाई लड़ने में दोनों की उपेक्षा हुई और उनकी योग्यता, देश सेवा और मानवता के लिए किए संघर्षों की अनदेखी कर उनका यथोचित सम्मान नहीं हुआ।

आज दलितों के अन्दर सम्मान की जो भूख जगी है, उसके पीछे 'बाबा जी' और 'बाबू जी' दोनों का महान संघर्ष है जो उन्होंने सरकार के अंदर व सरकार के बाहर रहकर हमारे लिए किया। आइये, उनके जन्म दिन पर उनके अधूरे कार्यों को पूरा करने का हम संकल्प लें। जय बाबा साहब। जय बाबू जी। •

पृष्ठ 1 का शेष भाग.....मूल निवासियों की सभ्यता आर्य सभ्यता से ऊंची थी

• बाबू जगजीवनराम, पूर्व उपप्रधानमंत्री, भारत

अन्त में परशुराम ने कहा–''राम रामापति कर धनुलेहूं। खेंवहू तीर मिटे संदेहू।'' क्षत्रीय कुमारों को प्रणाम कर वह सिधार गये। देखी, आपने ब्राह्मणवाद की पराजय। फिर भी ब्राह्मणवादी परम्परायें कायम कर दी गई। तब कृष्ण आये। उन्होंने खुलेआम ब्राह्मणवादी परम्पराओं को तुड़वाया, उन्हें तोड़ने में मदद की। वह बहुत शक्तिशाली और बुद्धिमान थे। ऐसा लगा कि ब्राह्मणवाद अपनी अन्तिम सांस ले रहा है। परन्तु ब्राह्मणवाद समाज पर छा गया। फिर महावीर और सिद्धार्थ आये। राम, कृष्ण, महावीर और सिद्धार्थ सभी क्षत्रिय थे। सभी राजा थे। राजवंश के थे। महावीर और सिद्धार्थ दोनों ने वैदिक परम्परा पर सीधा प्रहार किया। मैं जैन और बौद्ध धर्मों के मौलिक दार्शनिक सिद्धांतों की व्याख्या नहीं कर रहा हूं। दोनों ने वर्ण व्यवस्था का विरोध किया। जैन धर्म भारत के बाहर नहीं जा सका। बौद्ध धर्म सर्वत्र फैला। पर उस समय वर्ण व्यवस्था को खंडित नहीं किया गया सिर्फ वर्ण व्यवस्था की सूची में ब्राह्मणों को प्रथम स्थान से हटा कर द्वितीय स्थान पर रखा गया और क्षत्रीय को प्रथम स्थान दिया गया। वैश्य शूद्र को ज्यों का ज्यों रखा गया। उस समय क्रान्ति की जो आग फैली, उसके इतिहास को बारीकी से पढ़ों तो मालूम होगा कि सर्वहारा को किनारे–किनारे रखा गया।

बौद्ध धर्म के प्रचार और प्रसार के काम में सबसे प्रमुख हाथ राजाओं अर्थात क्षत्रियों का रहा। इसके अतिरिक्त बड़े–बड़े सेठ, पूंजीपति और व्यापारी ने बौद्ध धर्म के प्रचार में अपने कर्मचारियों को लगाया तथा बेशुमार आर्थिक सहायता दी। बुद्ध के लिए बड़े–बड़े बिहार का निर्माण किया। बुद्ध ने गरीबी, दासता और परवशता मिटाने के लिए कोई व्यवहारिक कदम क्यों नहीं उठाया? बल्कि जब कर्जदार लोग सेठों के तकाजा से परेशान होकर भिक्षु बनने लगे तो सेठों ने बुद्ध से शिकायत की कि हम तुम्हारे लिए बिहार बनाते हैं, तुम्हारे धर्म का प्रचार करते हैं और तुम्हारे भिक्षु हमारे कर्जदारों को 'साधू' बना रहे हैं तो बुद्ध ने आदेश जारी किया। उन्होंने कहा था कि ''भिक्षुओं कर्जदारों को प्रव्रज्या मत देना।'' जब दास, गुलाम और बंधुआ मजदूर मुक्ति पाने के लिए भिक्षु बनने लगे तो बुद्ध ने फिर सेठों ने बुद्ध से शिकायत की और बुद्ध ने आदेश दिया कि ''भिक्षुओं दासों को प्रव्रज्या नहीं देना।''

हमारा इतिहास मिटा दिया गया है। पराजितों का इतिहास रहने नहीं दिया जाता। लेकिन आर्यों ने अपना जो इतिहास लिखा है उसी में हमारा इतिहास है। उनके इतिहास की पंक्तियों के बीच से हमारा इतिहास झांक रहा है। मनु को कहना पड़ा है कि अगर एक अस्पृश्य किसी ब्राह्मण लड़की के साथ संभोग करे तो उसको कड़ी से कड़ी सजा दी जाये। मनु ऐसा क्यों कह रहा है? इसलिए कि अस्पृश्यों की ओर आकृष्ट होने के बहुत उदाहरण मिले होंगे। मनु ने उनके लिए कठिन दंड का विधान दिया। पर साथ ही साथ मनु ने हमारे पुरुषों के पौरुष का इतिहास लिख दिया। पढ़ो इसको, आंखें खोलकर पढ़ो। इक्के–दुक्के होने वाले अपराध के लिए इतनी कड़ी सजा नहीं दी जाती। लगता है ऐसी सैकड़ों घटनायें हो रही होंगी। तभी तो मनु महाराज को अपने दंड विधान में इसका उल्लेख करना पड़ा। जैसे मैंने पहिले कहा है कि आर्यों के आने से पहले मूल निवासियों का अपना धर्म नहीं बन सकता, याद रखो।

शिवजी पर जल चढ़ाओ तब भी ठीक, नहीं चढ़ाओ तब भी ठीक। तो मैंने मन ही मन पूछा आखिर हमारा धर्म क्या है? मन ही मन जवाब आया कि हिन्दू समाज में जन्मे हैं तो हम भी कह देते हैं कि हम हिन्दू हैं। किसी धर्म में उसके अनुयायी का उत्तरदायित्व होता है तो अधिकार भी होता है। हिन्दू धर्म में हमारा कोई अधिकार नहीं है। सामाजिक सेवाओं से वंचित है, मंदिर में नहीं जा सकते। जाना भी नहीं चाहते। जो देवता हमारे जाने से अपवित्र हो जाये ऐसे कमजोर देवता के पास जाने का क्यों झमेला? हां, काशी में विश्वनाथ जी के मंदिर में सत्याग्रह किया गया था, तब मैंने कहा था कि मैं इसलिए सत्याग्रह का समर्थन कर रहा हूं कि शंकर को मैं अनार्य देवता मानता हूं।

अनार्य देवता अपवित्र नहीं होता क्योंकि वह छूतछात, जाति–पात के भेदभाव को नहीं मानता। शंकर जैसा समदर्शी, उसको भी आर्यों ने बंद कर रखा है। मैं विश्वनाथ को मुक्त कराने जा रहा हूं। शंकर को आपने देखा है हिन्दू क्यों उसके लिंग की ही पूजा करते हैं। आर्य देवों ने शंकर को अपने बराबर नहीं माना। परेशान कर दिया तब शंकर ने सबको। ब्रह्मा, विष्णु सभी परेशान हो गये तब आये शंकर के पास और कहा कि माफ करो। शंकर ने दर्प से कहा (जरा क्रूड लैंग्वेज है) लेकिन बात तो सही है। शंकर ने कहा कि हमारे लिंग की पूजा करो। इसलिए लिंग की पूजा करने लगे।

मंदिरों में सब देवताओं की मूर्तियां स्थापित की जाती हैं। शिवालय में शंकर का सिर्फ लिंग ही स्थापित होता है। वह हमारा देवता है। मैं यह कह रहा था कि हमें तो सब को मुक्त कराना है। देवताओं को भी। •

डॉ. अम्बेडकर का भारत

। राजा शेखर बुंदू

आनंद बोलीमारा आंध्र के दलित कार्यकर्ता थे जो 2003 में दलित स्वाधिकार रैली का हिस्सा थे। इस रैली ने एक वाहन पर डॉ. अम्बेडकर की तस्वीर टांगकर ऐसे गांवों और कस्बों का सफर तय किया था जहां की भाषा भी समझ नहीं आती थी। हर जगह बड़ी संख्या में दलित डॉ. अम्बेडकर के प्रति श्रद्धा से वहां पहुंचते थे और कार्यकर्ताओं को खाना, दान और डीजल आदि मुहैया कराते थे। आनंद को एहसास हुआ कि डॉ. अम्बेडकर की महज एक तस्वीर कोलकाता से लेकर कन्याकुमारी तक सभी भाषाओं के अवरोधों को तोड़ते हुए दलितों को जोड़ने का एकमात्र कारण थी। महज 16 लाख आबादी में बसे दलितों के जीवन में डॉ. अम्बेडकर की उपस्थिति रोजाना है। डॉ. अम्बेडकर ने लाखों दीन– अछूतों को पहचान दी और बिना धर्म वाली मानवता का एजेंडा दिया।

बोधिसत्व भारत रत्न बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर (1891-1956) ने भारत के इतिहास में अपनी जगह दर्ज कर ली है। धीरे–धीरे लेकिन मजबूती के साथ उन्होंने ऐसे व्यक्ति के रूप में पहचान बनाई जो अपने आने वाले हर दौर में प्रासंगिक रहेंगे। ऐसा इसलिए नहीं है कि उनके अनुयायी अटूट हैं या फिर किसी जीवित या मृत व्यक्ति के मुकाबले उनकी सबसे ज्यादा मूर्तियां लगी हैं। इनकी वजह सिर्फ यह है कि उनका अनुकरण पीढ़ियों को साथ लेकर आगे बढ़ा है।उनका महत्व राजनीतिक, सामाजिक, वैचारिक, धार्मिक या कुछ और तब तक होगा, जब तक समाज में न्याय और समानता की मांग रहेगी और देश में अधिकारों के लिए संघर्ष रहेगा।

सन् 1943 में समाज सुधारक एम.जी. रानाडे कीजन्मशती पर एक भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने 'महान व्यक्ति' को कुछ ऐसे परिभाषित किया था–'ईमानदारी और बुद्धिमता एक इंसान को उसके अन्य साथियों से ज्यादा पहचान दिलाने के लिए काफी है। एक महान व्यक्ति के पास एक जाने– माने व्यक्ति से कुछ ज्यादा होना चाहिए। महान व्यक्ति को सामाजिक उद्देश्य की गतिशीलता से प्रभावित होना चाहिए और समाज के लिए संकटमोचन के तौर पर कार्य करना चाहिए। यह ऐसे तत्व है, जो उसे समाज में इज्जत और आदर दिलाते हैं।'

डॉ. अम्बेडकर अपनी इस परिभाषा में बिल्कुल सटीक बैठते है। जिस मंच से डॉ. अम्बेडकर को निर्विवाद अहमियत मिली वह था गांधी जी के राजनैतिक संरक्षण के खिलाफ आमरण अनशन, जिसे डॉ. अम्बेडकर ने 1932 में अछूतों के लिए अंग्रेजों से सुरक्षित करवाया। गांधी जी और डॉ. अम्बेडकर के बीच 24 सितंबर, 1932 को हुए पूना समझौते ने हमारी चुनाव प्रक्रिया की दिशा तय की जिसके चलते आरक्षित निर्वाचन–क्षेत्र परिभाषित हुए। पूना समझौते के जरिए डॉ अम्बेडकर ने अछूतों के लिए नौकरियों, शिक्षा और छात्रवृत्ति में आरक्षण की शुरुआत की। विरोध ा के बाद गांधी जी ने आखिरकार अनुसूचित जातियों को विधायी निकायों में प्रतिनिधित्व देने की

जन्म दिवस:14 अप्रैल

भारत की दो अमर विभूतियां

बाबा साहब और बाबूजी शत शत नमन

जन्म दिवस : 5 अप्रैल

दलित समाज के विद्वानो!
दलित समाज के सुधारको!
तुम क्यों
विष की खाई खोदते हो
तुम क्यों भेदभाव बोते हो
अलग–अलग करके
बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर
और बाबूजी को।
दोनों ही दलित समाज की शान हैं
दोनों ही हमारे लिए महान हैं
दोनों ही उत्पीड़ित हैं,
सामाजिक तिरस्कार के
दोनों ही आहत हैं
समाज की दुत्कार के।
बाबा ने जो खाका खींचा था
दलितों के उत्थान का
बाबू जी ने रंग भरकर उसमें
सजीव बनाया, हमारे काम का।
दलित समाज के कच्चे घड़े को
बाबा ने बाहर से थपकी दे
मजबूत किया
वहीं अन्दर से सहारा दे बाबू जी ने
उसे और पक्का किया।
बाबा चलते–चलते/जो
अधूरा छोड़ गये अपना काम
कागजी पन्नों पर
बाबूजी ने उस पर अमल कराया
चढ़ सरकारी कंधों पर।
बाबूजी/अगर कदम नहीं बढ़ाते
'आरक्षण' पूरा करने को
तो/अब तक/यह
कागजों में ही दबा होता
अपनी अंतिम सांसें गिनने को।
बाबा तो हममें जान फूंक गये
और/बता गये
हमारे अधिकारों को
पर/बाबू जी ने
संघर्ष सिखाया
हमें उन्हें पाने को।
आरक्षण की बैशाखियों पर चढ़े
जो दलित–अधिकारी बन बैठे हैं
वे बाबू जी के ऋण को न भूलें
जो साथ लिए वे बैठे हैं।
बाबू जी का नाम ही काफी था
दलितों का अधिकार दिलाने में
उन्होंने अपना सर्वस्व लगा दिया
दलितों को ऊपर उठाने में।
बाबा और बाबू जी
दोनों ही हमें बराबर हैं,
दोनों ही हमारे श्रद्धेय हैं
दलितों के सिक्के के ये दो पहलू हैं
दोनों ही स्मरणीय हैं, वन्दनीय हैं
और प्रिय हैं। •

– डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर

हामी भरी। लेकिन उन्होंने चुनावी प्रक्रिया को घुमा दिया, जिससे आरक्षित उम्मीदवार का चुनाव प्रमुख जातियों के वोट पर निर्भर हो गया। इस कारण ये उम्मीदवार प्रमुख सामाजिक शक्तियों के चापलूस बनकर रह गए। वह मकसद पूरा नहीं हो पाया जिसके लिए डॉ. अम्बेडकर ने इनका प्रतिनिधित्व मांगा था। ऐतिहासिक तौर पर गांधी जी और डॉ. अम्बेडकर ने इनका प्रतिनिधित्व मांगा था। ऐतिहासिक तौर पर गांधी जी और डॉ. अम्बेडकर की कई बातों पर सहमति थी लेकिन कार्यप्रणाली पर मतभेद था। सन् 1948 में संविधान को अंतिम रूप देने से पहले गांधी जी की हत्या के चलते सरदार पंटेल के पास कोई गुंजाइश नहीं बची थी कि वह दलितों और जनजातियों के लिए राजनीतिक संरक्षण को खत्म कर सकें। नेहरू ने 1961 में पहली बार इन्हें बढ़ाया। आरक्षित उम्मीदवारों के प्रतिनिधित्व का चरित्र वैसा ही रहा जैसा गांधी जी ने चाहा था।

गांधी जी की हत्या ने स्वराज प्राप्ति के लिए उनके योगदान को सीमित कर दिया था। डॉ. अम्बेडकर के नए भारत के विचार के कारण ही अधिकारों पर आधारित संविधान की स्थापना हुई। अब यही संवैधानिक तरीके खाद्य, जीविका, शिक्षा, राजनीतिक या सामाजिक अधिकार मांगने का जरिया है। जाहिर है कि डॉ. अम्बेडकर हमेशा अधिकारों के लिए लड़ने वाले हैं।

वयस्क मताधिकार डॉ. अम्बेडकर का ही विचार था जिसके लिए उन्होंने 1928 में साइमन कमीशन से लेकर बाद तक लड़ाई लड़ी। इसका कांग्रेस ने उस समय विरोध किया था जब यूरोप में महिलाओं और अमेरकिा में अश्वेतों को मताधिकारा देने का सवाल था। उस समय डॉ. अम्बेडकर ने वोट डालने के अधिकार के मुद्दे को आगे बढ़ाया। उन्होंने निर्वाचन सभा के सदस्यों को चेताया था कि भारतीय राज्यों को एक जगह लाने की उत्सुकता में वह लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों से समझौता न करें। डॉ. अम्बेडकर ने संरक्षण आधारित लोकतंत्र के बजाए नए भारत के लिए अधिकारों वाले लोकतंत्र को चुना।

डॉ. अम्बेडकर की आधुनिक भारत को लेकर जो सोच थी वह अक्सर सामने आ जाती है। सन् 1955 में उनका विचार था कि भाषायी राज्यों को अलग कर दो, बिहार और मध्य प्रदेश को दो–दो हिस्सों में बांट दो। यह 2000 में हकीकत में तब्दील हुआ। वह छोटेराज्यों के पक्षधर थे और चाहते थे कि उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र को तीन राज्यों में बांट दिया जाए। वह बंबई को शहरी राज्य और हैदराबाद को भारत की दूसरी राजधानी के रूप में देखते थे। डॉ. अम्बेडकर 1951 में हिंदू आचार अधिनियम के जरिए लैंगिग समानता को बढ़ाना चाहते थे जिसके लिए महिलाओं को बराबरी का हिस्सा देने की बात की, जो 2005 में जाकर हुआ है। लैंगिक समानता के मुद्दे पर डॉ. अम्बेडकर ने नेहरू के मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने का फैसला किया, जबकि रूढ़िवादी हिंदू नेताओं ने उन्हें आधुनिक मनु कहकर उपहास उड़ाया। डॉ. अम्बेडकर के सपने का भारत अभी तक नहीं बन पाया है। •

हिमायती
हिन्दी पाक्षिक पत्र
पढ़ें और आगे बढ़ें।

दलित उत्पीड़न कानून दुरुपयोग का यथार्थ

• संघप्रिय गौतम, पूर्व केंद्रीय मंत्री

भारत की अर्थव्यवस्था अगर कृषि पर आधारित है तो समाज व्यवस्था जाति के ऊपर आधारित है। जाति गुण और कर्म पर नहीं वरन जन्म पर आधारित है। हजारों वर्ष पुरानी मान्यताओं के कारण जाति के नाम पर ही अधिकार मिलते हैं और अधिकारों का हनन भी होता है। जाति के नाम पर शिक्षित होते हैं तो जाति के नाम पर ही अशिक्षित रह जाते हैं। जाति के नाम पर जहां सम्मान मिलता है वहीं जाति के नाम पर अपमान भी होता है। इतना ही नहीं जिस व्यक्ति या समाज को जाति के नाम पर नीचा माना गया, वह कृषि से भी वंचित रहा है। सो उसकी आर्थिक स्थिति स्वाभाविक रूप से खराब ही रही। भारतीय समाज की यह व्यवस्था हजारों वर्ष पुरानी है और इस व्यवस्था से दुखी, अधिकारों से वंचित प्रायः वे लोग रहे हैं, जिनको आज अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के नाम से जाना जाता है। इन दोनों वर्गों की ही वर्तमान जनसंख्या 1991 की जनगणना के अनुसार क्रमशः 16. 48 प्रतिशत और 8.08 प्रतिशत यानी कुल मिलाकर 24.56 प्रतिशत है। यानी भारतवर्ष की कुल जनसंख्या का लगभग एक चौथाई जातीय व्यवस्था के कारणों से यह समाज जो आज दलित समाज के नाम से जाना जाता है, राष्ट्रीय मुख्य धारा से तो अलग रहा ही है साथ ही यह देश भी दुनिया में पिछड़ा है।

आज भी यह वास्तविकता है कि तथाकथित दलित समाज के अनेक लोग खेती में काम करते हैं लेकिन खेत के मालिक नहीं हैं। उद्योग, कारखानों में काम कर लेकिन उद्योग के मालिक नहीं हैं। भट्टों पर ईंट थापते हैं लेकिन भट्टों

हिमायती
7 / मार्च (द्वितीय) 2026 (कुल पृष्ठ 8)
प्रकाशन तिथि : 15 मार्च, 2026
आर. एन. आई. नं. 40611/62
RNI No. 40611/62

शेष भाग.....दलित उत्पीड़न कानून दुरुपयोग का यथार्थ

के मालिक नहीं हैं। बस, ट्रक, टैक्सी, टैंपों आदि परिवहन संबंधी वाहनों पर चालक और परिचालक हैं लेकिन उनके मालिक नहीं है। बहुमंजिली इमारतें खड़ी करते हैं लेकिन खुद जमीन पर सोते हैं, जूते बनाते हैं पर खुद नंगे पांव रहते हैं। कपड़े बनाते हैं मगर बदन नहीं ढक सकते। आज इन दलितों के जीवन में जो भी परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं निःसंदेह आरक्षण के कारण ही हैं। यदि आरक्षण न होता तो शायद यह परिवर्तन भी देखने को नहीं मिलता। परिवर्तन भी गुणात्मक नहीं है। जिस अनुपात में अन्य वर्गों की जीवन पद्धति में परिवर्तन आया है उसी अनुपात में दलितों में परिवर्तन नहीं आया है। दोनों वर्गों के बीच की खाई और ज्यादा गहरी हुई है।

इतनी विषमताओं के बावजूद दलितों ने प्रायः धर्मांतरण नहीं किया, विदेशियों से सांठगांठ नहीं की। दलितों में आतंकवादी और उग्रवादी भी नहीं हैं। दलित भू–माफिया नहीं हैं। वे एनआरआई नहीं हैं इसलिए विदेश में उनका ध्यान भी नहीं है। देश के साथ कभी द्रोह नहीं किया और निरंतर सेवा व निर्माण का कार्य करते रहे हैं। फिर भी अन्य वर्गों के दिल और दिमाग में दलितों के प्रति करुणा, मैत्री, भ्रातृ भाव और मानवता का उचित स्थान नहीं है, जो होना चाहिए था इसलिए संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी घोषणाओं, संसद और विधानमंडलों में चर्चाओं और प्रचार–प्रसार के बावजूद न तो संवैधानिक प्रावधानों का क्रियान्वयन ही हुआ और न योजनाओं, कार्यक्रमों और नीतियों का अनुपालन हुआ। इसलिए दलित वांछित गंतव्य तक नहीं पहुंच सके। निसंदेह राजनैतिक चेतना के फलस्वरूप सत्ता में भागीदारी की ललक तो उनमें बहुत जगी लेकिन उसके कारण टकराव और घृणा का वातावरण पैदा हुआ। राजनेताओं और जन प्रतिनिधियों ने इसका ध्यान रखते हुए इन दलितों के अधिकारों की रक्षा के लिए 1955 में 'अनटचेब्लिटी आफेंस एक्ट' और 1976 में संशोधित 'प्रिवेंशन आफ सिविल राइट्स एक्ट' का निर्माण किया। मगर ये विधेयक भी कारगर सिद्ध नहीं हुए तो 1989 में 'अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति अत्याचार निरोधक अधिनियम' पारित किया गया जो 30, जनवरी 1990 को लागू हुआ। यह संसद का कानून है। यहां यह कहना अनिवार्य है कि इस कानून को संस ही संशोधित या रद्द कर सकती है। किसी राज्य विधानमंडल को इसमें हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। पहला भाग तो परिभाषाओं आदि से संबंधित है। दूसरे भाग में धारा 3 से धारा 9 तक अत्याचार से संबंधित अपराध दर्शाए गए हैं और उनकी सजा सुनिश्चित की की गई है। तीसरे भाग में जिला बदर, स्थान बदर करने आदि के प्रावधान हैं। चौथे भाग में विशेष अदालतों का गठन और पांचवें में बाकी बातें हैं। इस अधिनियम में अत्याचार से संबंधित अपराध दलितों के सम्मान अथवा आर्थिक मामले अथवा चुनाव में मतदान न करने देना अथवा किसी विशेष व्यक्ति या दल के पक्ष में मतदान करने के लिए मजबूर करना आदि है। स्वास्थ्य बिगाड़ने के लिए पानी में जहर मिलाना, आवाजाही पर पाबंदी लगाना, रास्ता बंद करना और उनके खिलाफ झूठे मुकदमे बनाना, झूठी गवाहियां दिलाना आदि हैं। इनमें से बहुत से अपराध यों तो भारतीय दंड संहिता में भी दर्शाए गए हैं, पर दंड प्रक्रिया संहिता के दोषों के कारण अपराधियों को सजा न मिलने से यह अधिनियम बनाना पड़ा है और इसमें विशेष प्रावधान किए गए हैं। उदाहरण के तौर पर इस सदी के आठवें दशक तक बड़े पैमाने पर गांव समाज की जमीन अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों को खेती के लिए आवंटित की गयी थी ! मगर ज्यादातर पट्टेदारों को आज तक कब्जे नहीं मिले। जमींदारी उन्मूलन अधिनियम की धारा 198 (2) के तहत कब्जा दिलाने की कार्रवाई की जा सकती है। मगर इच्छा शक्ति के अभाव में न तो इस तरह की कार्रवाई हुई और न ही अनाधिकार कब्जा करने वालों को कोई दंड मिला। इसलिए आवंटित भूमि आज तक दलित पट्टेदारों को नहीं मिल पाई। इस अधिनियम की धारा 3 उपधारा 1, 4 और 5 इसी से संबंधित हैं। इनमें प्रावधान है कि यदि कोई गैर अनुसूचित जाति, जनजाति का व्यक्ति अनुसूचित जाति व जनजाति के व्यक्ति की आवंटित भूमि पर जबरन कब्जा करता है या उसके कब्जे को हटा देता है या उसको कब्जा नहीं देता है तो ये बातें अत्याचार की श्रेणी में आएंगी और तब यह अधिनियम लागू होगा। इस अधिनियम में यह प्रावधान भी है कि जो मामले छुआछूत व छुआछूत की मानसिकता के कारण अपराधों को जन्म देते हैं और जिनके कारगर निराकरण किसी अन्य कानून के तहत नहीं हैं, वे भी अत्याचार की श्रेणी में होंगे।

छूआछूत और छुआछूत की मानसिकता समाप्त हो गई होती, इन सभी प्रावधानों का क्रियान्वयन हो गया होता और पट्टों पर आवंटित सरकारी जमीन के कब्जे दिला दिए गए होते या अनाधिकार कब्जा करने वालों ने आवंटित भूमि पर स्वेच्छा से कब्जे छोड़ दिए गए होते तो इस अधिनियम की कोई आवश्यकता ही नहीं थी। पर न तो स्वेच्छा से अनाधिकार कब्जे छोड़े गए और न सरकारों की इच्छा शक्ति व प्रशासन की नीयत अच्छी रही इसलिए कब्जे नहीं मिल पाए।

शेष भाग.....दलित उत्पीड़न कानून दुरुपयोग का यथार्थ

आज जब कब्जे दिलाए जा रहे हैं और कब्जा न देने पर अनाधिकारें कब्जा करने वालों के खिलाफ इस अधिनियम के तहत अत्याचार निरोध कार्रवाई की जा रही है तो इस पर चिल्ल–पों मचाई जा रही है कि अधिनियम का दुरूपयोग हो रहा है। यह बखेड़ा नया नहीं है। वर्षों से जब भी किसी अधिकारी ने इस नियम के तहत कार्रवाई की तो हमेशा यही आवाज उठाई गई कि इस अधिनियम का दुरूपयोग हो रहा है और इसमें निर्दोष गैर अनुसूचित जाति–जनजाति के लोगों को तंग किया जा रहा है। मगर वास्तविकता बिलकुल विपरीत है। इलाहाबाद हाईकोर्ट में इस अधिनियम के खिलाफ लगभग 225 याचिकाएं तो केवल 1995 में दायर की गई थीं जिनमें अधिनियम के दुरूपयोग और इसकी कुछ धाराओं के असंवैधानिक होने की बात कही गई थी। विस्तृत चर्चा के बाद हाईकोर्ट की पूर्ण पीठ ने सभी याचिकाओं को निराधार मानकर खारिज कर दिया था।

इस अधिनियम के दुरूपयोग की बात अभी तक किसी संसदीय या विधानसभा समिति की रपट में भी सामने नहीं आई है। किसी सरकारी या गैर सरकारी संस्था का कोई सर्वे भी नहीं है, जो दुरूपयोग के आरोपों को सही ठहराए। अलबत्ता हाल में उत्तर प्रदेश की एक हाई पावर पुलिम समिति का सर्वे जरूर सामने आया है जिसके निष्कर्ष चौंकाने वाले हैं। इस सर्वे से पता चलता हैं कि उत्तर प्रदेश के मेरठ, मुरादाबाद और सहारनपुर मंडलों में पिछले तीन महीने के दौरान दलित महिलाओं पर अत्याचार तीस फीसदी से ज्यादा बढ़ गए हैं। कुछ अत्याचार तो छुआछूत की मानसिकता के कारण हुए बताए गए हैं। पिछले दिनों पूर्व गृह सचिव माधव गोडबोले के एक लेख में भी दलितों पर बढ़ते अत्याचारों के राज्यवार आंकड़े देकर चिंता जताई गई थी।

तथाकथित हरिजन एक्ट के लागू होने के बाद भारत सरकार के कल्याण मंत्रालय की एक समिति ने संसद में जो रपट रखी थी उसमें अस्सी के दशक के आंकड़े देकर अत्याचारों का उल्लेख किया गया था। अकेले 1990 में अनुसूचित जातियों के साथ अत्याचार के 17737 और जनजातियों के साथ 3650 मामलों का खुलासा किया गया था। समिति के मुताबिक ये केवल पुलिस में दर्ज मामले थे। इसके अलावा 82 फीसदी मामलों को तो पुलिस ने दर्ज ही नहीं किया था। दर्ज मामलों में भी अदालत से सजा केवल 22 में ही हो पाई थी।

दलितों पर अत्याचार के मामले लगातार बढ़े हैं। फिर भी कुछ राजनीतिक आए दिन चुनाव प्रचार के नए–नए मुद्दे तलाशने की होड़ में अधिनियम के दुरूपयोग का मिथ्या प्रचार कर रहे हैं। इस दुष्प्रचार से उन्हें कोई राजनैतिक लाभ मिले या न मिले मगर देश और समाज का तो वे नुकसान कर हो रहे हैं। इस दुष्प्रचार, से सामाजिक एकता को खतरा पहुंचा है। भ्रष्टाचार, जातिवाद और अपराध की राजनीति करने वालों ने मानो इस दुष्प्रचार को अपनी वैतरणी मान लिया है। अधिनियम के दुरूपयोग की बात केंद्र सरकार द्वारा की गई पड़ताल में भी मिथ्या साबित हुई है। अभी तक किसी भी राज्य सरकार की तरफ से केंद्र के पास न तो इस अधिनियम के दुरूपयोग की कोई शिकायत आई हैं और न ही किसी ने इसमें किसी तरह के संशोधन की सिफारिश की है।

हो सकता है कि दूसरे कानूनों की तरफ कुछ मामलों में जहां–तहां इस कानून का भी दुरूपयोग किया गया हो। मगर क्या इक्का–दुक्का शिकायतों के आधार पर पूरे कानून को ही रद्द करने की मांग को औचित्यपूर्ण माना जा सकता है? आवश्यक वस्तु कानून का उदाहरण सामने है जिसके दुरूपयोग की अनेक शिकायतों के बावजूद भी उसे रद्द नहीं किया गया। उचित तो यही होगा कि इस कानून के बारे में चिलन–पों करने की बजाय इसके लागू होने के बाद की स्थिति की समीक्षा की जाए। देशभर में सर्वे कराया जाए कि बेकसूर लोगों को फंसाने में इस कानून का कहां, कब और कितना दुरूपयोग किया गया।

कोई सर्वेक्षण किए बिना आधिकारिक रूप से यह कैसे कहा जा सकता है कि इस कानून के तहत दर्ज मामलों को रफा–दफा करने के अपराध में गैर अनुसूचित जाति–जनजाति के अफसरों के खिलाफ जानबूझकर कार्रवाई की गई? सर्वेक्षण से ही तय हो सकता है कि इस कानून के किस विशेष प्रावधान के दुरूपयोग की घटनाएं होती हैं। लेकिन उत्तर प्रदेश में बसपा–भाजपा सरकार बनने के बाद इस कानून के दुरूपयोग के आरोपों को लेकर जो मुहिम छिड़ी है, उसकी बुनियाद यथार्थ से ज्यादा राजनीति पर टिकी है। सामाजिक समरसता की कीमत पर राजनीति करने वालों को क्या यह देश माफ करेगा? •

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। □ सह सम्पादक एवं व्यवस्थापक - जय सुमनाक्षर, मो. 9810278936 **Email-sumanakshar@ymail.com**

नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।

सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009